

वर्षा ऋतु और कृषि उत्पादन में विशिष्ट नक्षत्रों के गोचर का प्रभाव: शास्त्रीय परम्परा, कृषि-मौसम विज्ञान और वैज्ञानिक साक्ष्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

(Influence of the Transit of Specific Nakshatras on the Rainy Season and Agricultural Production: An Analytical Study of Classical Tradition, Agrometeorology and Scientific Evidence)

Parhlad Singh Ahluwalia, Shodh Prakashan, Hisar, Haryana

सार

भारतीय कृषि की उत्पादकता का बड़ा भाग आज भी दक्षिण-पश्चिम मानसून की वर्षा पर टिका है। इसी कारण कृषि-परम्परा में रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, मघा और हस्त जैसे नक्षत्रों को वर्षा तथा बुवाई के संकेतक के रूप में स्मरण किया जाता रहा है। प्रस्तुत शोध-पत्र PRISMA-ScR की संरचना पर आधारित एक विश्लेषणात्मक समीक्षा है, जिसमें संस्कृत के मूल स्रोतों, कृषि-मौसम विज्ञान के अनुभवजन्य अध्ययनों और वायुमंडलीय विज्ञान के साक्ष्यों को एक साथ रखकर यह परखा गया है कि "नक्षत्र-गोचर" का वर्षा और कृषि-उत्पादन पर कारणात्मक प्रभाव सिद्ध होता है या नहीं। लेखक ने वर्ष 2024 के लिए सूर्य के नक्षत्र-प्रवेश की खगोलीय गणना तथा वराहमिहिर-काल से वर्तमान तक के अयनांश-विस्थापन की तुलनात्मक गणना भी की है।

मुख्य निष्कर्ष तीन हैं। पहला, नक्षत्र आधारित वर्षा-जलवायु अध्ययनों में चरम-मानसून काल की वर्षा का परिवर्तन-गुणांक 40 से 80 प्रतिशत तक पाया गया है, जो केवल नक्षत्र के आधार पर कृषि-निर्णय लेने को जोखिमपूर्ण बनाता है। दूसरा, सूर्य के नक्षत्र-प्रवेश की तिथियाँ वराहमिहिर-काल की तुलना में ऋतु-चक्र के सापेक्ष लगभग 21 दिन आगे खिसक चुकी हैं, अतः प्राचीन कहावतों का अक्षरशः प्रयोग समय-विसंगति उत्पन्न करता है। तीसरा, नक्षत्र वर्षा के "कारक" नहीं, बल्कि लगभग 14 दिनों की "कैलेंडर-इकाइयाँ" हैं; उनकी उपयोगिता लोक-स्मृति और बुवाई-कैलेंडर के रूप में है, पूर्वानुमान-कौशल के रूप में नहीं। शोध-पत्र अन्त में परम्परागत ज्ञान और आधुनिक कृषि-मौसम सेवाओं के सहयोगी उपयोग का एक व्यावहारिक ढाँचा प्रस्तुत करता है।

कूट-शब्द: नक्षत्र, गोचर, दक्षिण-पश्चिम मानसून, कृषि उत्पादन, कृषिपराशर, बृहत्संहिता, पंचांग, अयनांश, वर्षा-परिवर्तनशीलता, पारम्परिक ज्ञान

1. प्रस्तावना

1.1 पृष्ठभूमि

भारत के लिए वर्षा केवल एक मौसमी घटना नहीं, बल्कि आर्थिक और सामाजिक जीवन की धुरी है। भारत मौसम विज्ञान विभाग (IMD) ने 1971-2020 के आँकड़ों के आधार पर जून से सितम्बर की मानसून-वर्षा का दीर्घावधि औसत 87.0 सेमी (868.6 मिमी) निर्धारित किया है और वर्ष 2022 में वास्तविक वर्षा 92.5 सेमी, अर्थात् औसत का लगभग 106 प्रतिशत रही [1]। मानसून

की प्रणाली केवल एक स्थानीय हवा का खेल नहीं है; यह स्थल और समुद्र के तापीय अन्तर, अन्तरा-उष्णकटिबन्धीय अभिसरण क्षेत्र की गति, महासागरीय तापमान और एल-निनो-दक्षिणी दोलन जैसी प्रक्रियाओं के जटिल संयोजन से बनती है [2,3]।

कृषि पर इसका प्रभाव प्रत्यक्ष है। केन्द्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान (CRIDA) के अनुसार देश के लगभग 141 मिलियन हेक्टेयर शुद्ध बोए गए क्षेत्र में से करीब 80 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र वर्षा-आधारित है और यह क्षेत्र लगभग 40 प्रतिशत खाद्यान्न उत्पादन में योगदान देता है [4,5]। गाड़गिल और गाड़गिल ने दिखाया कि कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में हिस्सा घटने के बावजूद गम्भीर सूखे का GDP पर प्रभाव दशकों से 2 से 5 प्रतिशत के बीच बना रहा है [6]। इसी क्रम में खाद्यान्न-उत्पादन के उतार-चढ़ाव के विश्लेषण ने यह रेखांकित किया कि सामान्य मानसून वर्षों में भी वार्षिक उतार-चढ़ाव स्वाभाविक है, जबकि वर्षा की बड़ी विसंगतियाँ उत्पादन में कहीं अधिक अन्तर पैदा करती हैं [7]। भारतीय कृषि पर जलवायु-प्रभावों के अध्ययन भी इसी निष्कर्ष की पुष्टि करते हैं कि वर्षा और तापमान की भिन्नताएँ फसल-उत्पादन को निर्णायक रूप से प्रभावित करती हैं [8]।

ऐसी पृष्ठभूमि में किसान ने सदियों से वर्षा के समय और मात्रा का अनुमान लगाने के लिए अनेक संकेत विकसित किए: बादलों का रूप, पक्षियों और चींटियों का व्यवहार, पवन की दिशा, और आकाशीय पिण्डों की स्थिति। इनमें नक्षत्र-आधारित कालगणना सबसे अधिक संगठित और लोक-स्मृति में सबसे गहरी बैठी हुई है। "रोहिणी में तपना", "मृगशिरा में बुवाई की तैयारी", "आर्द्रा में मानसून", "पुष्य और मघा में भरपूर पानी", "हस्त की झड़ी" जैसी कहावतें ग्रामीण भारत में आज भी सुनाई देती हैं। प्रश्न यह है कि क्या ये कहावतें किसी प्राकृतिक नियमितता का सार हैं, या केवल कैलेंडर और अनुभव के संयोग से उपजी स्मृतियाँ।

1.2 नक्षत्र और गोचर की अवधारणा

भारतीय खगोल-परम्परा में आकाश के क्रान्तिवृत्त (ecliptic) पट्टी को 27 बराबर भागों में बाँटा गया है, और प्रत्येक भाग $13^{\circ}20'$ का होता है। इन भागों को चन्द्रमा की लगभग दैनिक गति के संदर्भ में "नक्षत्र" कहा गया। रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा जैसे नाम इन खण्डों में स्थित प्रमुख तारा-समूहों से लिये गए हैं [9,10]। "गोचर" शब्द का अर्थ किसी ग्रह या ज्योतिष्क का इन खण्डों से होकर गुजरना है। दो प्रकार के गोचर कृषि-चर्चा में सर्वाधिक आते हैं: एक, चन्द्रमा का नक्षत्र-गोचर, जिसमें चन्द्रमा लगभग एक दिन में एक नक्षत्र पार करता है; और दो, सूर्य का नक्षत्र-प्रवेश, जिसमें सूर्य लगभग 13 से 14 दिन एक नक्षत्र में रहता है। कृषि-कहावतों में अधिकांशतः दूसरी स्थिति, अर्थात् "सूर्य का अमुक नक्षत्र में होना", ही अभिप्रेत होती है। यही कारण है कि प्रस्तुत अध्ययन में सूर्य-नक्षत्र को मुख्य इकाई माना गया है और चन्द्र-गोचर पर पृथक् विचार किया गया है।

1.3 शोध-अन्तराल

इस विषय पर साहित्य तीन धाराओं में बँटा हुआ है। पहली धारा श्रद्धा और परम्परा-आधारित लेखन की है, जो बिना परीक्षण के नक्षत्र-फल को स्वीकार करती है। दूसरी धारा कठोर सांख्यिकीय अध्ययनों की है, जो वर्षा के आँकड़ों को नक्षत्र-अवधियों में बाँटकर उनका विश्लेषण करती है [11,12]। तीसरी धारा संस्कृत ग्रन्थों के पाठ-आधारित वैज्ञानिक पुनर्पाठ की है [13,14]। इन धाराओं में संवाद कम है। अनेक अध्ययन खगोलीय पक्ष, अर्थात् अयनांश के कारण होने वाले तिथि-विस्थापन, को स्पष्टतः सम्मिलित नहीं करते; और परम्परा-आधारित लेखन प्रायः वर्षा की स्वाभाविक परिवर्तनशीलता को भूल जाता है। यह शोध-पत्र इसी अन्तराल को भरने का प्रयास है।

1.4 उद्देश्य, शोध-प्रश्न और परिकल्पना

इस अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- संस्कृत के प्रमुख स्रोतों में वर्षा, कृषि और नक्षत्र के सम्बन्ध को किस रूप में प्रतिपादित किया गया है, इसका निरूपण करना।
- नक्षत्र-आधारित वर्षा और कृषि पर किए गए अनुभवजन्य अध्ययनों के निष्कर्षों की तुलनात्मक समीक्षा करना।
- सूर्य के नक्षत्र-प्रवेश की तिथियों और उनके ऐतिहासिक विस्थापन का परिमाणात्मक आकलन करना।
- यह निर्धारित करना कि नक्षत्र-गोचर और वर्षा के बीच कोई भौतिक या सांख्यिकीय कारणात्मक सम्बन्ध उपलब्ध साक्ष्यों से सिद्ध होता है या नहीं।
- परम्परागत ज्ञान को आधुनिक कृषि-मौसम सेवाओं के साथ जोड़ने का व्यावहारिक ढाँचा सुझाना।

शोध-प्रश्न यह है: क्या विशिष्ट नक्षत्रों में सूर्य या चन्द्रमा के गोचर के आधार पर वर्षा की मात्रा और कृषि-उत्पादन का विश्वसनीय पूर्वानुमान सम्भव है? इसके लिए शून्य-परिकल्पना (H_0) यह रखी गई कि नक्षत्र-अवधियों की वर्षा केवल ऋतु-चक्र की औसत जलवायु को दोहराती है और उससे अधिक पूर्वानुमान-कौशल प्रदान नहीं करती। वैकल्पिक परिकल्पना (H_1) यह है कि नक्षत्र-अवधियाँ जलवायु-औसत से परे कोई अतिरिक्त सूचना देती हैं।

2. शोध-पद्धति

2.1 अध्ययन-अभिकल्प

यह अध्ययन एक संरचित वर्णनात्मक समीक्षा (structured narrative review) है, जिसकी रिपोर्टिंग PRISMA 2020 कथन और उसके स्कोपिंग-समीक्षा संस्करण PRISMA-ScR के ढाँचे से प्रेरित है [15,16]। चूँकि विषय में संस्कृत-पाठ, कृषि-मौसम विज्ञान और खगोल-गणना जैसे भिन्न स्वरूप के स्रोत सम्मिलित हैं, इसलिए औपचारिक मेटा-विश्लेषण सम्भव नहीं था; इसके स्थान पर तुलनात्मक संश्लेषण और मौलिक परिमाणात्मक निदर्शन का मिश्रित उपागम अपनाया गया।

2.2 पात्रता मानदंड

समावेशन के मानदंड ये रखे गए: (क) वर्ष 2024 तक प्रकाशित सामग्री; (ख) संस्कृत के प्राथमिक या उनके प्रामाणिक सम्पादित-अनूदित संस्करण; (ग) नक्षत्र, पंचांग या परम्परागत वर्षा-पूर्वानुमान का अनुभवजन्य परीक्षण करने वाले अध्ययन; (घ) मानसून-भौतिकी, वर्षा-प्रवृत्ति और कृषि-प्रभाव पर समकक्ष-समीक्षित या संस्थागत प्रकाशन; और (ङ) परम्परागत ज्ञान और शोध-नैतिकता पर वैचारिक आधार देने वाले स्रोत।

2.3 स्रोतों की पहचान, छँटाई और समावेशन

PRISMA के चार चरणों, अर्थात् पहचान, छँटाई, पात्रता-मूल्यांकन और समावेशन, का अनुसरण किया गया। पहचान के चरण में IMD, ICAR-CRIDA, कृषि-मौसम विज्ञान की पत्रिकाओं, संस्कृत-पाठ के डिजिटल संग्रहों और अन्तरराष्ट्रीय जलवायु-साहित्य में लक्षित अन्वेषण किया गया। छँटाई के चरण में शीर्षक और सार के आधार पर विषय-असम्बद्ध सामग्री हटाई गई। पात्रता-मूल्यांकन में तिथि, पद्धति की स्पष्टता और परिणामों की उपलब्धता जाँची गई। अन्तिम चरण में समावेशित सभी स्रोत इस पत्र की सन्दर्भ-सूची में दिए गए हैं।

ईमानदारी से यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि यह अन्वेषण किसी एक डेटाबेस में प्रविष्ट बूलियन खोज-स्ट्रिंग का औपचारिक परिणाम नहीं है; इसलिए प्रविष्ट-अभिलेखों की संख्या जैसे PRISMA प्रवाह-आरेख के आँकड़े यहाँ कृत्रिम रूप से नहीं दिए गए हैं। जो औपचारिक खोज-आधारित प्रवाह-आरेख बनाना चाहें, वे यही पात्रता-मानदंड अपनाकर Scopus, Web of Science या CAB Abstracts में पुनः अन्वेषण कर सकते हैं। समावेशित स्रोतों को चार समूहों में रखा गया: संस्कृत एवं शास्त्रीय खगोल-स्रोत;

नक्षत्र/पंचांग-आधारित अनुभवजन्य अध्ययन; वायुमंडलीय एवं कृषि-जलवायु विज्ञान के आधार-स्रोत; तथा सामाजिक-सांस्कृतिक एवं शोध-नैतिकता के वैचारिक स्रोत।

2.4 विश्लेषण की विधियाँ

विश्लेषण तीन स्तरों पर किया गया। पहले स्तर पर प्रत्येक अनुभवजन्य अध्ययन से स्थान, अवधि, पद्धति, मुख्य परिणाम और सीमा का सारणीबद्ध निष्कर्षण किया गया। दूसरे स्तर पर लेखक ने सूर्य की दृश्य क्रान्तिवृत्तीय देशान्तर-गणना के लिए मानक निम्न-परिशुद्धता सूत्रों और लाहिड़ी (चित्रापक्ष) अयनांश के आधार पर वर्ष 2024 में सूर्य के प्रत्येक नक्षत्र-प्रवेश की अनुमानित तिथि निकाली; और वराहमिहिर-काल (लगभग 550 ई.) के लिए अयनांश को पुरस्सरण की औसत दर, लगभग 50.3 विकला प्रति वर्ष, से आगे-पीछे खिसकाकर तुलनात्मक ऋतु-समतुल्य तिथि निकाली। इस आकलन में लाहिड़ी अयनांश का शून्य-बिन्दु लगभग 285 ई. माना गया है। तीसरे स्तर पर वर्षा की परिवर्तनशीलता को समझाने के लिए गामा-वितरण की सरल धारणा पर एक निदर्शन किया गया, ताकि परिवर्तन-गुणांक का व्यावहारिक अर्थ स्पष्ट हो सके।

2.5 नैतिक विचार और मौलिकता

परम्परागत ज्ञान का अध्ययन करते समय समुदायों की आस्थाओं और अनुभवों का सम्मान आवश्यक है, किन्तु साथ ही दावों की निष्पक्ष परीक्षा भी शोध-नैतिकता का भाग है [17]। इस पत्र में किसी परम्परा का उपहास नहीं किया गया है; केवल यह जाँचा गया है कि कौन-सा दावा किस कोटि के साक्ष्य से समर्थित है। मौलिकता सुनिश्चित करने के लिए सभी तथ्य स्रोत-निर्दिष्ट हैं, प्रत्यक्ष उद्धरण केवल संस्कृत मूल-श्लोकों तक सीमित हैं, और शेष सामग्री लेखक के अपने शब्दों में पुनर्गठित है; साहित्यिक चोरी की पहचान और निवारण की सामान्य विधियों पर उपलब्ध विवेचन को भी ध्यान में रखा गया है [18]।

3. शास्त्रीय एवं सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि

3.1 वैदिक और स्मृति-परम्परा में वर्षा और अन्न

वैदिक चिन्तन में वर्षा को देवता "पर्जन्य" के रूप में देखा गया। ऋग्वेद का एक सूक्त पर्जन्य की स्तुति करते हुए कहता है:

*अच्छा वद तवसं गीर्भिराभिः स्तुहि पर्जन्यं नमसा विवासा
कनिक्रददृषभो जीरदानू रेतो दधात्योषधीषुगर्भम्॥ (ऋग्वेद 5.83.1)*

भावार्थ यह है कि गर्जना करते हुए बलशाली पर्जन्य ओषधियों (वनस्पतियों) में जीवनदायी बीज स्थापित करते हैं [19]। इस दृष्टि में वर्षा और वनस्पति-जीवन का सम्बन्ध प्रत्यक्ष है। गीता में यही कार्य-कारण शृंखला दार्शनिक रूप में आती है:

*अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥ (भगवद्गीता 3.14)*

अर्थात् प्राणी अन्न से बनते हैं, अन्न वर्षा से उत्पन्न होता है, वर्षा यज्ञ से, और यज्ञ कर्म से [20]। मनुस्मृति इसी शृंखला में सूर्य को जोड़ती है:

*अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥ (मनुस्मृति 3.76)*

यहाँ वर्षा का मूल "आदित्य", यानी सूर्य, माना गया है [21]। यह ध्यान देने योग्य है कि सूर्य को वर्षा का स्रोत मानना आधुनिक जल-चक्र की समझ से अनुकूल है, क्योंकि समुद्री वाष्पन का ऊर्जा-स्रोत सौर-विकिरण ही है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि सूर्य का किसी विशिष्ट तारा-समूह के सम्मुख होना वर्षा की मात्रा तय करता है; यह भेद आगे के विश्लेषण में केन्द्रीय है।

3.2 ज्योतिष का मूल प्रयोजन: कालविधान

वेदांग-ज्योतिष में ज्योतिष का आरम्भिक उद्देश्य वर्षा-फल बताना नहीं, बल्कि यज्ञों के उचित काल का निर्धारण करना था:

*वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्व्या विहिताश्च यज्ञाः।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञान्॥ (वेदांग-ज्योतिष)*

यहाँ ज्योतिष को स्पष्टतः "कालविधानशास्त्र" कहा गया है [22]। इसका विश्लेषणात्मक महत्त्व यह है कि नक्षत्र मूलतः समय की ऋतु-घड़ी के रूप में विकसित हुए। आकाश में सूर्य या चन्द्रमा की स्थिति से यह जाना जाता था कि वर्ष का कौन-सा भाग चल रहा है। इस कालगणना का कृषि-उपयोग स्वाभाविक था, क्योंकि कृषि-कर्म का अपना ऋतु-क्रम है; पर कालसूचक होना और कारक होना दो भिन्न बातें हैं। बाद की सहस्राब्दियों में जब फलित-ज्योतिष का विकास हुआ, तब कालसूचक नक्षत्रों को फल-सूचक भी मान लिया गया, और यहीं से "नक्षत्र-गोचर से वर्षा" की धारणा विस्तृत हुई [9,10]।

3.3 कृषिपराशर: वर्षा-केन्द्रित कृषि-शास्त्र

संस्कृत में कृषि पर समर्पित सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थों में कृषिपराशर की गणना होती है। इसके सम्पादित-अनूदित संस्करण उपलब्ध हैं और विद्वान इसकी रचना-काल पर भिन्न मत रखते हैं [14,23]। ग्रन्थ में ग्रहों-नक्षत्रों के कृषि पर प्रभाव, बादलों के प्रकार, वर्षा-मापन, तात्कालिक वर्षा के लक्षण (जैसे चींटियों का अण्डे लेकर बिलों से निकलना या मेंढकों का अचानक बोलना), बुवाई-काल और अन्न-संग्रह जैसे विषय आते हैं [14,24]। ग्रन्थ की केन्द्रीय पंक्तियाँ वर्षा को कृषि का मूल घोषित करती हैं:

*वृष्टिमूला कृषिः सर्वा वृष्टिमूलं च जीवनम्।
कृषिर्धन्या कृषिर्मध्या जन्तूनां जीवनं कृषिः॥ (कृषिपराशर; पाठभेद सम्भव)*

भाव यह है कि सम्पूर्ण कृषि वर्षा पर आधारित है, और जीवन भी वर्षा-मूलक है; कृषि धन्य और पवित्र है और प्राणियों का जीवन कृषि से ही है [14]। यह कथन आधुनिक कृषि-जलवायु विज्ञान के निष्कर्ष से मेल खाता है, जैसा प्रस्तावना में दिए गए आँकड़ों से स्पष्ट है। आर्यगर् ने कृषिपराशर के वर्षा-पूर्वानुमान के प्रयोग का एक व्यावहारिक अनुभव भी दर्ज किया है, यद्यपि वह एक अनुभव-टिप्पणी है और उसमें व्यवस्थित सांख्यिकीय परीक्षण नहीं है [25]।

3.4 बृहत्संहिता: प्रारम्भिक वर्षा-विज्ञान का संकलन

वराहमिहिर (लगभग छठी शताब्दी) की बृहत्संहिता खगोल, मौसम, भूगोल और शिल्प का विश्वकोशीय संग्रह है। इसके वर्षा-सम्बन्धी अध्यायों में गर्भलक्षण, गर्भधारण, प्रवर्षण, रोहिणीयोग, स्वातियोग, आषाढीयोग, वातचक्र और सद्योवर्षण जैसे प्रकरण सम्मिलित हैं [13]। "मेघ-गर्भ" की अवधारणा में माना गया है कि कुछ निश्चित चान्द्र-तिथियों और नक्षत्रों में बादलों के "गर्भ" बनते हैं और निश्चित अवधि के बाद वर्षा के रूप में प्रसव होता है। प्राचीन भारत में वर्षा के मापन की विधियों का भी अध्ययन हुआ है, जो इस बात का प्रमाण है कि मात्रात्मक दृष्टि भारतीय चिन्तन में अनुपस्थित नहीं थी [26]। परन्तु ध्यान रहे कि बृहत्संहिता की भविष्यवाणियाँ ग्रह-नक्षत्र-स्थिति, बादलों के लक्षण, वायु-दिशा और लोक-अवलोकन का मिश्रण हैं; इनमें कौन-सा घटक वास्तविक मौसम-संकेत है और कौन-सा खगोलीय परम्परा, इसका पृथक्करण पाठ-आधारित पुनर्परीक्षण से ही सम्भव है।

3.5 पंचांग, लोक-स्मृति और संस्कार का समाजशास्त्रीय आयाग

कृषि-नक्षत्र ज्ञान का वास्तविक संवाहक पंचांग और लोक-कहावतें हैं। भाषा, संस्कार और संस्कृति के पारस्परिक सम्बन्ध पर हुए समाजशास्त्रीय विश्लेषण बताते हैं कि समुदाय का ज्ञान औपचारिक शिक्षा से अधिक संस्कारों, रीति-रिवाजों और भाषिक रूपों के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्थानान्तरित होता है [27–29]। यह वैचारिक दृष्टि कृषि-कहावतों को समझने में उपयोगी है: "आर्द्रा में बुवाई" जैसी उक्ति केवल मौसम-सूचना नहीं, सामुदायिक स्मृति का एक संस्कार-रूप भी है, जो छन्द, लय और मुहावरे के सहारे स्थायी बनी रहती है। साथ ही पर्यावरण-संरक्षण में महिलाओं की भूमिका पर हुए वैश्विक विवेचन यह संकेत देते हैं कि कृषि-परम्पराओं और पारिस्थितिक ज्ञान को सुरक्षित रखने में स्त्रियों की भूमिका प्रायः केन्द्रीय रही है [30]। इन सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययनों का प्रयोग यहाँ केवल वैचारिक सन्दर्भ के रूप में है; इनका विषय सीधे नक्षत्र और वर्षा नहीं है, इसलिए इनसे नक्षत्र-प्रभाव के पक्ष या विपक्ष में कोई अनुभवजन्य निष्कर्ष नहीं निकाला गया है।

4. विश्लेषणात्मक यथार्थ: नक्षत्र-गोचर क्या है और क्या नहीं

4.1 कालसूचक बनाम कारक

नक्षत्र-गोचर को समझने का पहला सूत्र यह है कि सूर्य का किसी नक्षत्र में होना एक *समय-सूचना* है। जिस प्रकार घड़ी में दोपहर के बारह बजना यह बताता है कि दिन का कौन-सा भाग चल रहा है, पर घड़ी स्वयं धूप उत्पन्न नहीं करती, उसी प्रकार "सूर्य आर्द्रा में है" यह बताता है कि वर्ष की धुरी पर पृथ्वी किस बिन्दु पर है। मानसून की वर्षा पृथ्वी की उसी स्थिति से उत्पन्न होने वाले सौर-विकिरण, स्थल-सागर तापान्तर और वायुमण्डलीय परिसंचरण से बनती है [2,3]। अतः नक्षत्र और वर्षा के बीच जो सहसम्बन्ध दिखता है, उसका स्वाभाविक कारण दोनों का एक ही वार्षिक चक्र से बँधा होना है; इसमें किसी दूरस्थ तारे की भूमिका आवश्यक नहीं।

4.2 भौतिक कारण-मार्ग की परीक्षा

यदि नक्षत्र-गोचर वर्षा को प्रभावित करता, तो कोई भौतिक माध्यम होना चाहिए। सम्भावित माध्यम तीन हो सकते हैं: तारों से आने वाला विकिरण या बल, चन्द्रमा का गुरुत्वीय ज्वार, और सूर्य की स्थिति से जुड़ा सौर-ऊर्जा का मौसमी वितरण। प्रथम माध्यम के विषय में इतना स्पष्ट है कि नक्षत्र-समूहों के तारे पृथ्वी से दसियों से सैकड़ों प्रकाश-वर्ष दूर हैं और उनकी ओर से आने वाला विकिरण या गुरुत्व पृथ्वी के मौसम-तन्त्र में किसी मापने योग्य ऊर्जा-स्रोत की भूमिका नहीं निभाता। दूसरे माध्यम, चन्द्र-ज्वार, का वायुमण्डल पर प्रभाव वायुमण्डलीय ज्वार-सिद्धान्त में विस्तार से अध्ययन किया गया है और वह दैनिक-मौसमी उतार-चढ़ाव की तुलना में अत्यन्त क्षीण पाया गया है [31]। तीसरा माध्यम वास्तविक है, पर वह तारे के नहीं, ऋतु के माध्यम से कार्य करता है, यानी सूर्य की *उत्तर-दक्षिण स्थिति*, न कि उसके पीछे दिखने वाला तारा-समूह। यही भेद आगे की तालिका-1 में परिमाणात्मक रूप से दिखता है।

4.3 अयनांश-विस्थापन: ऋतु और नक्षत्र का अलगाव

नक्षत्र-आधारित गणना निरयन, अर्थात् तारों के सापेक्ष स्थिर, पद्धति पर टिकी है, जबकि ऋतुएँ सायन, यानी विषुव-बिन्दु के सापेक्ष, पद्धति से बँधी हैं। पृथ्वी की धुरी के पुरस्सरण के कारण वसन्त-विषुव बिन्दु तारों के सापेक्ष लगभग 50.3 विकला प्रति वर्ष, अर्थात् लगभग 72 वर्ष में एक अंश, खिसकता है [9]। लाहिड़ी अयनांश वर्ष 2024 में लगभग 24.19° आता है; इसका अर्थ है कि तारों पर आधारित नक्षत्र-कैलेंडर और ऋतु-आधारित कैलेंडर के बीच अब लगभग 24 दिन का अन्तर है। जब वराहमिहिर के समय (लगभग 550 ई.) यह अन्तर लगभग 3.7° था, तब दोनों कैलेंडर लगभग साथ चलते थे। पिछले लगभग 1,470 वर्षों में नक्षत्र-

तिथियाँ ऋतु-चक्र के सापेक्ष लगभग 20.5° आगे खिसक गई हैं, जिसके कारण प्राचीन कहावतों का आज अक्षरशः अनुप्रयोग समय-विसंगति पैदा करता है।

तालिका-1 में लेखक की गणना के अनुसार इस विस्थापन का स्वरूप दिखाया गया है।

तालिका 1: सूर्य के नक्षत्र-प्रवेश की अनुमानित तिथियाँ (2024) और वराहमिहिर-काल के ऋतु-समतुल्य बिन्दु (लेखक की गणना)

नक्षत्र	सूर्य-प्रवेश, 2024 (निरयन)	अवधि (दिन)	लगभग 550 ई. में समान ऋतु-स्थिति की आज की तिथि	अन्तर (दिन)
मृगशिरा	7 जून	13.96	17 मई	21
आर्द्रा	21 जून	14.00	31 मई	21
पुनर्वसु	5 जुलाई	13.96	14 जून	21
पुष्य	19 जुलाई	13.96	28 जून	21
मघा	16 अगस्त	13.83	26 जुलाई	21
हस्त	26 सितम्बर	13.54	5 सितम्बर	21

टिप्पणी: तिथियाँ निम्न-परिशुद्धता सौर-देशान्तर सूत्र और लाहिड़ी अयनांश पर आधारित अनुमान हैं और विश्व-समय के अनुसार ± 1 दिन तक अन्तर सम्भव है। 550 ई. वाला स्तम्भ वही सायन देशान्तर वर्तमान ग्रेगोरियन कैलेंडर में किस तिथि पर पड़ता है, यह दर्शाता है; अर्थात् यह "ऋतु-स्थिति की समतुल्यता" है, उस काल की ऐतिहासिक तिथि नहीं।

इस तालिका से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलता है। आज सूर्य जून के लगभग तीसरे सप्ताह में आर्द्रा में प्रवेश करता है, जो उत्तर भारत में सामान्यतः मानसून के पहुँचने के आसपास का समय है। परन्तु जब यह परम्परा बनी, तब वही ऋतु-स्थिति मई के अन्तिम दिनों में पड़ती थी, जो केरल में मानसून आगमन के सामान्य समय (1 जून के आसपास) के निकट है। अर्थात् परम्परा का सम्भावित मूल-अर्थ "मानसून का आरम्भ" और आज की तिथि का अर्थ "सूर्य का नक्षत्र में प्रवेश" एक नहीं रहे। यह निष्कर्ष लेखक की गणना पर आधारित एक परिकल्पनात्मक व्याख्या है, इसकी पुष्टि के लिए ऐतिहासिक पाठ-विश्लेषण आवश्यक है।

4.4 चन्द्र-गोचर का प्रश्न

चन्द्रमा लगभग 27.3 दिन में तारों के सापेक्ष परिक्रमा पूरी करता है, जबकि सूर्य के सापेक्ष उसकी कलाएँ 29.5 दिन में दोहराती हैं। नक्षत्र का आधार पहला, यानी तारा-सापेक्ष, चक्र है। 1960 के दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका के आँकड़ों पर कुछ अध्ययनों ने चन्द्र-कलाओं के अनुरूप वर्षा में छोटे आवर्ती घटक की सूचना दी थी, और स्वतन्त्र आँकड़ों में भी एक चान्द्र-घटक की चर्चा हुई [32,33]। पर ये निष्कर्ष कला-आधारित, अर्थात् सूर्य-सापेक्ष, चक्र के थे, तारा-सापेक्ष नक्षत्र-चक्र के नहीं, और उनकी व्याख्या तथा पुनरुत्पादन वैज्ञानिक बहस का विषय रहे। इस प्रकार वे नक्षत्र-विशिष्ट वर्षा-प्रभाव के लिए प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं देते।

4.5 स्पष्ट प्रतीत होने वाली सफलता के मनोवैज्ञानिक और सांख्यिकीय कारण

जब कोई कहावत "अक्सर सही" प्रतीत होती है, तो इसके चार सामान्य कारण होते हैं। प्रथम, *आधार-दर*: मानसून में जुलाई-अगस्त वैसे भी सर्वाधिक वर्षा के महीने हैं, अतः इस अवधि के नक्षत्र को "वर्षा-वाला" कहना अधिकांश वर्षों में सही ठहरता है। द्वितीय, *पुष्टि-पूर्वाग्रह*: जब वर्षा होती है तो कहावत याद रखी जाती है, जब नहीं होती तो उसे "अपवाद" मान लिया जाता है। तृतीय, *अस्पष्ट कथन*: "अच्छी वर्षा" जैसी उक्तियाँ इतनी लचीली होती हैं कि हर परिणाम उनसे संगत बैठ जाता है। चतुर्थ, *व्याख्या की स्वतन्त्रता*:

एकाधिक ग्रहों, नक्षत्रों और चन्द्र-स्थितियों के संयोजन से बने नियमों में हर परिणाम की किसी न किसी संयोजन से व्याख्या सम्भव है। नियन्त्रित परिस्थितियों में किए गए "द्वि-अन्ध" परीक्षण में, जो ज्योतिषीय व्यक्तित्व-मिलान पर किया गया था, ज्योतिषी संयोग से बेहतर प्रदर्शन नहीं कर सके [34]। यह परीक्षण वर्षा-पूर्वानुमान का नहीं था, इसलिए इसे सीधे नक्षत्र-वर्षा पर लागू नहीं किया जा सकता; फिर भी यह दर्शाता है कि सामान्य अनुभव-आधारित विश्वास को नियन्त्रित परीक्षण में परखना क्यों अनिवार्य है।

5. सम्बन्धित अनुसन्धान: समीक्षा, परिणाम और तुलना

5.1 मुख्य अनुभवजन्य अध्ययन

इस समीक्षा में समाविष्ट सर्वाधिक प्रासंगिक अनुभवजन्य अध्ययन निम्नलिखित हैं। सभी के निष्कर्ष उनके प्रकाशित सारांशों के अनुसार दिए गए हैं।

(क) महाराष्ट्र और गोवा का नक्षत्र-वर्षा जलवायु-अध्ययन। डे, जोशी और प्रकाश राव ने महाराष्ट्र और गोवा के उप-मण्डलों के लिए वर्षा की प्रत्येक नक्षत्र-अवधि (औसतन 13–14 दिन) के आधारभूत सांख्यिकीय मापदण्ड निकाले। उन्होंने पाया कि चरम-मानसून काल में वर्षा का परिवर्तन-गुणांक 40 से 80 प्रतिशत के क्रम में है और निष्कर्ष निकाला कि नक्षत्र-आधारित वर्षा पर कृषि-गतिविधियों की पूर्ण निर्भरता अच्छा अभ्यास नहीं है [11]।

(ख) बिहार (पटना और समस्तीपुर) का अध्ययन। सुबाश, सिंह और प्रिया ने नक्षत्र-अवधियों की वर्षा की परिवर्तनशीलता और प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया और चार प्रचलित परम्परागत कथनों का धान-गेहूँ की उत्पादकता से सम्बन्ध परखा। दोनों स्थानों पर सर्वाधिक वर्षा और सर्वाधिक वर्षा-दिवस पुनर्वसु (6–19 जुलाई) में रहे, उसके बाद पुष्य (20 जुलाई–2 अगस्त) में। पटना में आर्द्रा से उत्तरा (13–26 सितम्बर) तक और समस्तीपुर में रोहिणी से पूर्वा (31 अगस्त–12 सितम्बर) तक परिवर्तन-गुणांक 100 प्रतिशत से नीचे रहा। प्रवृत्तियों में पटना में पूर्वा नक्षत्र के दौरान प्रतिवर्ष 0.965 मिमी की वृद्धि और हस्त में 0.857 मिमी की कमी, तथा समस्तीपुर में आर्द्रा में 1.536 मिमी की वृद्धि और हस्त में 0.774 मिमी की कमी सार्थक पाई गई [12]।

(ग) कर्नाटक का पंचांग-सत्यापन। बेंगलुरु के कृषि विश्वविद्यालय के एक शोध-प्रबन्ध में कर्नाटक के 28 वर्षों (1989–2017) के वर्षा-आँकड़ों से पंचांग की वर्षा-भविष्यवाणियों की तुलना की गई। वार्षिक वर्षा के लिए 4 वर्षों में और मानसून-वर्षा के लिए 10 वर्षों में सहमति 75 प्रतिशत से अधिक रही। अन्तर्वर्ग सहसम्बन्ध गुणांक ने संकेत दिया कि पंचांग के अकेले घटक वर्ष की वर्षा का स्वरूप तय नहीं कर सकते। नक्षत्र-आधारित वर्गीकरण में रोहिणी से हस्त नक्षत्र तक औसत वर्षा में कम परिवर्तनशीलता मिली, और ज्येष्ठा तथा पूर्वाभाद्रपद में कुछ वर्षा-श्रेणियों के लिए सार्थक प्रवृत्तियाँ मिलीं [35]।

(घ) बृहत्संहिता की भविष्यवाणियों का चार क्षेत्रों में परीक्षण। एक तुलनात्मक अध्ययन में बृहत्संहिता की 27 भविष्यवाणियाँ, जिनमें शुक्र की गति, राहु-चार, ग्रह-युति, आर्द्रा में सूर्य-प्रवेश, बादल-वायु दिशा और चन्द्र-युति पर आधारित कथन थे, तिरुपति, अजमेर, शिलांग और पोर्ट ब्लेयर के 1992–93 से 2002–03 तक के IMD आँकड़ों से मिलाई गईं। कुल मिलाकर अनुरूपता 50 प्रतिशत से ऊपर रही, प्रायः 55–57 प्रतिशत, और कुछ मामलों में 80 से 100 प्रतिशत तक [36]।

(ङ) चन्द्र-कला और वर्षा। अमेरिकी आँकड़ों में वर्षा के चन्द्र-कला-आवर्ती घटक की रिपोर्टें और उन पर स्वतन्त्र प्रतिक्रिया [32,33]।

(च) ज्योतिष का द्वि-अन्ध परीक्षण। कार्लसन का परीक्षण, जिसमें ज्योतिषी नियन्त्रित स्थिति में संयोग से अधिक सफल नहीं रहे [34]।

5.2 तुलनात्मक सारणी

तालिका 2: चयनित अध्ययनों की तुलना

अध्ययन	क्षेत्र / अवधि	विधि	मुख्य परिणाम	मुख्य सीमा
डे, जोशी, राव (2004) [11]	महाराष्ट्र एवं गोवा उप-मण्डल	नक्षत्र-अवधि-वार वर्षा-सांख्यिकी	चरम मानसून में CV 40-80%	नक्षत्र-कौशल का सीधा परीक्षण नहीं; पूर्वानुमान-सत्यापन नहीं
सुबाश, सिंह, प्रिया (2011) [12]	पटना, समस्तीपुर (बिहार)	CV, प्रवृत्ति और चार कहावतों का धान-गेहूँ उत्पादकता से मिलान	अधिकतम वर्षा पुनर्वसु में; कुछ नक्षत्रों में सार्थक रैखिक प्रवृत्ति	दो स्थल; कहावतों के उत्पादकता-परिणाम सार में स्पष्ट नहीं
कृषि विश्वविद्यालय शोध-प्रबन्ध (2019) [35]	कर्नाटक, 1989-2017	पंचांग-कथन बनाम वास्तविक वर्षा; ICC; MK-प्रवृत्ति	मानसून में 10 वर्षों में >75% सहमति; घटक अकेले निर्णायक नहीं	सहमति का आधार-दर से तुलनात्मक मूल्यांकन सार में नहीं
बृहत्संहिता तुलनात्मक अध्ययन (2012) [36]	तिरुपति, अजमेर, शिलांग, पोर्ट ब्लेयर; 1992-2003	27 भविष्यवाणियों का IMD आँकड़ों से मिलान	समग्र अनुरूपता >50%, प्रायः 55-57%	मिलान का "संयोग-स्तर" से तुलनात्मक आधार स्पष्ट नहीं; कम वर्ष
ब्रैडले आदि (1962); एडली और बोवेन (1962) [32,33]	अमेरिका एवं अन्य आँकड़े	चन्द्र-कला-आवर्ती घटक का विश्लेषण	छोटा आवर्ती घटक रिपोर्ट	कला-आधारित, नक्षत्र-आधारित नहीं; बहस का विषय

6. तुलनात्मक विश्लेषण और परिणामों की व्याख्या

6.1 परिवर्तनशीलता का व्यावहारिक अर्थ

परिवर्तन-गुणांक 40-80 प्रतिशत का अर्थ सामान्य पाठक के लिए समझना कठिन है। इसे स्पष्ट करने के लिए लेखक ने गामा-वितरण की सरल धारणा के साथ गणना की, जो वर्षा के लिए एक मानक सन्निकटन है। औसत को 100 मान लें तो CV 40 प्रतिशत पर किसी नक्षत्र की वर्षा के औसत के ± 20 प्रतिशत के भीतर रहने की सम्भावना लगभग 38 प्रतिशत है। CV 60 प्रतिशत पर यह लगभग 26 प्रतिशत और CV 80 प्रतिशत पर लगभग 19 प्रतिशत रह जाती है। इसी प्रकार औसत के आधे से कम वर्षा होने की सम्भावना क्रमशः लगभग 8, 21 और 31 प्रतिशत बनती है।

औसत के डेढ़ गुना से अधिक वर्षा होने की सम्भावना इन्हीं तीन स्थितियों में क्रमशः लगभग 11, 18 और 21 प्रतिशत आती है। अर्थात् CV बढ़ने पर "औसत के निकट" वर्षा दुर्लभ और दोनों छोरों की वर्षा सामान्य होती जाती है।

अतः यदि किसान केवल यह सुनकर निर्णय ले कि अमुक नक्षत्र में "औसत" वर्षा होगी, तो प्रत्येक पाँच में से लगभग तीन से चार वर्षों में वास्तविक वर्षा औसत से 20 प्रतिशत से अधिक भिन्न होगी। यह डे आदि के उस निष्कर्ष की मात्रात्मक पुष्टि है कि केवल नक्षत्र पर टिकी योजना जोखिमपूर्ण है [11].

6.2 "सहमति" और "कौशल" का भेद

कर्नाटक के पंचांग-अध्ययन में मानसून-वर्षा के लिए 10 वर्षों में 75 प्रतिशत से अधिक सहमति मिली, जिसे सतही दृष्टि से पंचांग की सफलता माना जा सकता है। पर भविष्यवाणी का मूल्यांकन केवल सहमति से नहीं होता, उसे जलवायु-औसत या संयोग के आधार से बेहतर होना चाहिए। यदि अनुमान केवल तीन श्रेणियों (कम, सामान्य, अधिक) में हों, तो अनुमान लगाने वाले को संयोग से ही लगभग एक-तिहाई सटीकता मिल सकती है, और कुल 28 वर्षों में 10 वर्षों में ऊँची सहमति इसी क्रम की प्रतीत होती है, यद्यपि सार में वर्गीकरण की सूक्ष्मताएँ नहीं दी गईं। इसी प्रकार तिरुपति-अजमेर-शिलांग-पोर्ट ब्लेयर के अध्ययन में 55–57 प्रतिशत अनुरूपता का महत्त्व तब बनता है जब हम जानें कि द्विआधारी (हाँ/नहीं) कथनों में संयोग-स्तर 50 प्रतिशत है। इस दृष्टि से 50 प्रतिशत से कुछ अधिक अनुरूपता संयोग से अलग करना कठिन है, जबकि कुछ वर्गों में दिखी 80–100 प्रतिशत अनुरूपता का संख्यात्मक आधार छोटा है और अधिक आँकड़ों पर पुनः परीक्षण माँगता है [35,36]। यह विश्लेषण लेखक की व्याख्या है; मूल अध्ययनों के पूर्ण पाठ में सांख्यिकीय सार्थकता के परीक्षण हो सकते हैं, जिन्हें यहाँ सार के आधार पर नहीं परखा जा सका।

6.3 नक्षत्र-वर्षा-जलवायु बनाम सामान्य ऋतु-जलवायु

सुबाश आदि का परिणाम कि सर्वाधिक वर्षा पुनर्वसु और पुष्य में हुई [12], पटना-समस्तीपुर की जुलाई-मध्य की मानसून-शिखर वर्षा का वर्णन है। किसी भी 14-दिवसीय कैलेंडर-विभाजन में, चाहे उसे "पखवाड़ा" कहें, यही शिखर दिखता। अर्थात् नक्षत्र-विभाजन से जो जलवायु-चक्र उभरता है, वही कोई भी समान-अवधि वाला विभाजन देता; इसका अर्थ यह नहीं कि पुनर्वसु नामक तारा-खण्ड ने वर्षा बढ़ाई। इसी प्रकार प्रवृत्ति-निष्कर्ष, जैसे पूर्वा में वृद्धि और हस्त में कमी [12], मानसून के लौटने और वर्षा-वितरण में बदलाव का संकेत हो सकते हैं। भारत में मानसून-वर्षा की प्रवृत्तियों और चरम वर्षा-घटनाओं में परिवर्तन पर व्यापक साहित्य है [37,38], और जलवायु-परिवर्तन के सन्दर्भ में जल-चक्र के बदलाव पर अन्तर-सरकारी पैनल का मूल्यांकन भी उपलब्ध है [39]। इसलिए नक्षत्र-वार प्रवृत्तियों की व्याख्या में स्थानीय जलवायु-परिवर्तन पर विचार किए बिना उसे नक्षत्र का "स्वभाव-परिवर्तन" कहना अनुचित होगा।

6.4 आधुनिक पूर्वानुमान की तुलनात्मक स्थिति

आधुनिक दीर्घावधि पूर्वानुमान सांख्यिकीय और गतिकीय मॉडलों पर टिके हैं, जो समुद्र-सतह तापमान, एल-निनो, हिन्द महासागर द्विध्रुव और वायुमण्डलीय पूर्वसूचकों का प्रयोग करते हैं [2,40]। उच्च विभेदन वाले दैनिक ग्रिड-आँकड़े, जैसे IMD का $0.25^\circ \times 0.25^\circ$ ग्रिड-आँकड़ा (1901–2010), इस पूर्वानुमान-सत्यापन के लिए आधार उपलब्ध कराते हैं [41]। इन तरीकों की भी सीमा है, विशेषकर स्थानीय और अल्पावधि स्तर पर, पर वे सत्यापन-योग्य भौतिक कारणों और परिमाणात्मक त्रुटि-अनुमानों पर आधारित हैं। नक्षत्र-आधारित कथन इस कसौटी पर तब तक नहीं ठहरते जब तक वे समान आँकड़ों पर पूर्व-घोषित, परीक्षण-योग्य रूप में प्रस्तुत न किए जाएँ।

6.5 परम्परागत ज्ञान का वास्तविक मूल्य

उपर्युक्त आलोचना का अर्थ परम्परागत ज्ञान को अनुपयोगी ठहराना नहीं है। पक्षी, चींटी, मेंढक और पौधों के फूलने जैसे जैव-संकेतों के आधार पर वर्षा-अनुमान का दस्तावेजीकरण करने वाले अध्ययनों में प्रस्तावित है कि परम्परागत संकेतों का आधुनिक पूर्वानुमान के साथ समन्वय स्थानीय सूचना-आवश्यकताओं को पूरा करने में उपयोगी हो सकता है [42]। अफ्रीका में किए गए अध्ययनों ने भी दिखाया कि स्थानीय वर्षा-ज्ञान किसानों के निर्णयों में सक्रिय भूमिका निभाता है और वैज्ञानिक पूर्वानुमान के साथ संयोजित किया जा सकता है [43,44]। भारत में बुवाई-निर्णयों के लिए जलवायु-सूचना के प्रयोग का अध्ययन बताता है कि बुवाई की तिथि निर्धारित

करने में मौसम-आधारित, वर्षा-संचय जैसे मानदण्ड अधिक उपयोगी साबित हो सकते हैं, केवल कैलेंडर-तिथि नहीं [45]। इन तीनों सूत्रों से यह निष्कर्ष निकलता है कि नक्षत्र की सही भूमिका "सूचना-माध्यम" और "लोक-कैलेंडर" की है, पूर्वानुमान-इंजन की नहीं।

6.6 विशिष्ट नक्षत्रों का पृथक् विश्लेषण

शीर्षक में "विशिष्ट नक्षत्र" का उल्लेख है, इसलिए प्रचलित कृषि-परम्परा में सर्वाधिक चर्चित नक्षत्रों को अलग-अलग परखना उपयोगी है। यहाँ लोक-मान्यता का वर्णन मान्यता के रूप में ही है, और जहाँ अनुभवजन्य साक्ष्य उपलब्ध है वहीं उसका उल्लेख किया गया है।

रोहिणी। लेखक की गणना में वर्ष 2024 में सूर्य लगभग 24 मई को रोहिणी में प्रवेश करता है। लोक-परम्परा में इस अवधि के आरम्भिक नौ दिनों को भीषण गर्मी का काल ("नौतपा") माना जाता है और धारणा है कि इस काल की तपन से आगे की वर्षा अच्छी होती है। यह धारणा तापीय स्थल-सागर अन्तर वाले मानसून-तन्त्र के गुणात्मक विवरण से मेल खाती है, क्योंकि गर्म स्थल निम्न-दाब क्षेत्र बनाकर समुद्री पवनों को खींचता है [2,3]। परन्तु किसी एक वर्ष की मई-अन्त की गर्मी और उसी वर्ष की कुल मानसून-वर्षा के बीच मात्रात्मक सम्बन्ध को उपलब्ध समीक्षित स्रोतों में स्थापित नहीं पाया गया; इसलिए इसे वैज्ञानिक नियम नहीं, एक गुणात्मक अवलोकन ही माना जाना चाहिए। कर्नाटक के पंचांग-अध्ययन ने रोहिणी से हस्त तक की अवधि में वर्षा की अपेक्षाकृत कम परिवर्तनशीलता का संकेत दिया [35]; यह परिणाम बताता है कि इस पूरे खण्ड में वर्षा का "आश्चर्य" परिमाण मिलता है, न कि अकेले रोहिणी की कोई विशेषता।

मृगशिरा और आर्द्रा। पारम्परिक रूप से ये नक्षत्र मानसून के आगमन और बुवाई की तैयारी से जुड़ते हैं। तालिका-1 के अनुसार आज सूर्य मृगशिरा में लगभग 7 जून और आर्द्रा में लगभग 21 जून को प्रवेश करता है। पटना और समस्तीपुर के आँकड़ों में आर्द्रा अवधि (22 जून-5 जुलाई) में परिवर्तन-गुणांक 100 प्रतिशत से कम रहा, और समस्तीपुर में आर्द्रा के दौरान वर्षा में प्रतिवर्ष 1.536 मिमी की सार्थक वृद्धि दर्ज हुई [12]। यह इस क्षेत्र में मानसून के सक्रिय होने का संकेत है, पर महाराष्ट्र-गोवा के अध्ययन में चरम-मानसून काल की अनिश्चितता 40-80 प्रतिशत रही [11], जो बताता है कि निष्कर्ष क्षेत्र-विशिष्ट हैं। इसी कारण "आर्द्रा में मानसून" का कोई सार्वभौमिक कथन सही नहीं बैठता।

पुनर्वसु और पुष्य। बिहार के दोनों स्थलों पर सर्वाधिक वर्षा और सर्वाधिक वर्षा-दिवस पुनर्वसु (6-19 जुलाई) में रहे, और उसके बाद पुष्य (20 जुलाई-2 अगस्त) में [12]। यह इन स्थलों के जुलाई-मध्य के जलवायु-शिखर का सटीक वर्णन है। अनुभवजन्य रूप से यह परम्परा के उस भाव का समर्थन करता है कि जुलाई वर्षा का प्रमुख महीना है; पर जैसा 6.3 में स्पष्ट किया गया, यही शिखर किसी भी समान-अवधि विभाजन में दिखता।

मघा और पूर्वा/उत्तरा। अगस्त के उत्तरार्ध और सितम्बर के आरम्भ में पड़ने वाले इन नक्षत्रों के लिए उपलब्ध अध्ययनों में सबसे उल्लेखनीय परिणाम पटना में पूर्वा नक्षत्र के दौरान वर्षा में प्रतिवर्ष 0.965 मिमी की वृद्धि है [12]। यह प्रवृत्ति मानसून के उत्तरार्ध में वर्षा के सापेक्ष बढ़ने का संकेत दे सकती है, पर इसे केवल दो स्थलों के आधार पर सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता। मघा के लिए इस समीक्षा में समाविष्ट स्रोतों में पृथक् मात्रात्मक निष्कर्ष नहीं मिला, जो साहित्य में एक स्पष्ट रिक्ति है।

हस्त। पटना और समस्तीपुर दोनों में हस्त नक्षत्र के दौरान वर्षा में सार्थक गिरावट की प्रवृत्ति (क्रमशः 0.857 और 0.774 मिमी प्रतिवर्ष) पाई गई [12]। यह समय मानसून की वापसी का है, और इस अवधि में कमी का अर्थ मानसून-वापसी के पहले होने या वर्षा-वितरण में बदलाव का संकेत हो सकता है। चूँकि हस्त की सूर्य-तिथियाँ (तालिका-1 में लगभग 26 सितम्बर) भी वराहमिहिर-काल की तुलना में 21 दिन आगे खिसकी हैं, इसलिए हस्त की परम्परागत "अन्तिम झड़ी" वाली मान्यता आज की ऋतु-स्थिति से भी मेल नहीं खाती।

इन विशिष्ट नक्षत्रों का संयुक्त चित्र यह है कि जलवायु-सारणी के रूप में नक्षत्रों में स्थानीय अर्थ है, पर "नक्षत्र का अपना प्रभाव" सिद्ध करने वाला कोई सर्वव्यापी निष्कर्ष उपलब्ध साहित्य में नहीं है।

7. विभिन्न दृष्टिकोणों से विश्लेषण

किसी भी परम्परागत धारणा की प्रामाणिक परख तभी सम्भव है जब उसे एक ही कसौटी से नहीं, अनेक दृष्टिकोणों से देखा जाए। इस अध्ययन में छह दृष्टिकोण अपनाए गए हैं।

7.1 खगोल-भौतिकी का दृष्टिकोण

इस दृष्टि से नक्षत्र एक निर्देशांक-प्रणाली है। सूर्य या चन्द्रमा की स्थिति बताने के लिए आकाश को 27 खण्डों में बाँटा गया है, जैसे नक्शे पर देशान्तर की रेखाएँ खींची जाती हैं। रेखाओं के नाम से भूमि की उर्वरता नहीं बदलती। चन्द्रमा का गुरुत्वीय ज्वार वायुमण्डल में है, पर बहुत क्षीण [31]; तारों का कोई मापने योग्य ऊर्जा-प्रभाव मौसम पर नहीं। इस दृष्टि से वर्षा के नक्षत्र-कारणत्व का कोई भौतिक आधार उपलब्ध नहीं है, जबकि कालसूचक के रूप में नक्षत्र पूर्णतः वैध है।

7.2 कृषि-मौसम विज्ञान का दृष्टिकोण

कृषि-मौसम विज्ञान का प्रश्न यह है कि क्या नक्षत्र-अवधि फसल-निर्णयों के लिए उपयोगी कैलेंडर-इकाई है। यहाँ उत्तर आंशिक रूप से सकारात्मक है। नक्षत्र-वार वर्षा-सारणियाँ स्थानीय जलवायु की समझ में सहायक हैं, जैसा बिहार और कर्नाटक के अध्ययन दिखाते हैं [12,35]। पर महाराष्ट्र-गोवा का अध्ययन चेतावनी देता है कि इन अवधियों की वर्षा में इतनी अधिक अनिश्चितता है कि अकेले इस पर निर्भरता उचित नहीं [11]। अतः यह दृष्टिकोण नक्षत्र को "जलवायु-सारणी की इकाई" मानता है, "कारक" नहीं।

7.3 शास्त्रीय-पाठगत दृष्टिकोण

पाठ-आलोचना की दृष्टि से कृषिपराशर और बृहत्संहिता को उनके ऐतिहासिक सन्दर्भ में पढ़ना चाहिए। दोनों ग्रन्थ वर्षा-फल के साथ बादलों, पवन, चींटियों, मेंढकों और ग्रह-स्थितियों का मिश्रित संकलन हैं [13,14]। कृषि-शास्त्रों पर संस्कृत-स्रोतों के सर्वेक्षण दिखाते हैं कि इन ग्रन्थों में बीज-चयन, भूमि-तैयारी, जल-प्रबन्धन और कीट-नियन्त्रण जैसे कृषि-व्यावहारिक विषय भी सुसंगत रूप से मिलते हैं [24]। इस दृष्टि से इन ग्रन्थों का सबसे मजबूत योगदान कृषि-व्यवहार-संहिता का है, जबकि ग्रह-नक्षत्र-आधारित वर्षा-भविष्यवाणी का अंश उस काल की खगोल-परम्परा का प्रतिबिम्ब है, जिसे आज के अयनांश-सुधार के साथ ही समझा जा सकता है [9]।

7.4 समाजशास्त्रीय और सांस्कृतिक दृष्टिकोण

समाजशास्त्रीय दृष्टि से नक्षत्र-कहावतों की सफलता का एक कारण उनकी *संचरण-क्षमता* है। लोक-भाषा, छन्द और संस्कार-आधारित रीतियों के माध्यम से ज्ञान का अन्तरपीढ़ीय प्रसार होता है [27–29]। इस प्रकार कहावत "सही" है या नहीं, यह प्रश्न एक है, और कहावत "स्थायी" क्यों है, यह दूसरा। स्थायित्व का कारण भाषिक-सांस्कृतिक सुगमता है, जो अनिवार्यतः वैज्ञानिक सत्यता का प्रमाण नहीं। पारिस्थितिक ज्ञान के संरक्षण में महिलाओं की भूमिका का विवेचन यह भी याद दिलाता है कि ऐसी परम्पराओं के साथ हस्तक्षेप करते समय उनके वाहकों को सहभागी बनाना आवश्यक है [30]। यहाँ भी ये स्रोत वैचारिक आधार भर देते हैं, नक्षत्र-वर्षा पर साक्ष्य नहीं।

7.5 जलवायु-परिवर्तन का दृष्टिकोण

जलवायु-परिवर्तन के सन्दर्भ में पुराने औसत नई स्थितियों पर लागू नहीं होते। भारतीय वर्षा-प्रवृत्तियों और चरम वर्षा-घटनाओं के अध्ययन ने दिखाया है कि कई क्षेत्रों में वर्षा की तीव्रता और वितरण बदल रहे हैं [37,38]। जल-चक्र पर अन्तर-सरकारी पैनल का आकलन भी मानसून-वर्षा के भविष्य में परिवर्तन की सम्भावना का संकेत देता है [39]। परम्परागत कहावतें, जो अपेक्षाकृत स्थिर जलवायु में अनुभव से बनीं, इस नई अस्थिरता में और अधिक अविश्वसनीय हो सकती हैं। यह दृष्टिकोण अयनांश-विस्थापन के साथ मिलकर दोहरी चेतावनी देता है: कैलेंडर भी सरका है और जलवायु भी।

7.6 शोध-नैतिकता का दृष्टिकोण

नैतिक दृष्टि दो ओर से सावधानी मांगती है। एक ओर, परम्परागत ज्ञान को बिना परीक्षण के "वैज्ञानिक" घोषित कर देना पाठकों और किसानों को भ्रमित कर सकता है। दूसरी ओर, उसे बिना जाँच के "अन्धविश्वास" कह देना समुदायों के ज्ञान का अपमान और सम्भावित उपयोगी सूचनाओं का अपव्यय है। सामाजिक विज्ञान में शोध-नैतिकता सम्बन्धी चर्चाएँ ईमानदार रिपोर्टिंग, स्रोत-स्वीकृति और निष्पक्षता पर बल देती हैं [17], और मौलिकता की रक्षा के लिए उचित उद्धरण तथा पहचान-विधियाँ आवश्यक मानी जाती हैं [18]। प्रस्तुत पत्र ने इन दोनों कसौटियों का पालन करने का प्रयास किया है।

8. परिकल्पना-परीक्षण का निष्कर्ष और एकीकृत उपयोग-ढाँचा

8.1 परिकल्पना का परिणाम

उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर शून्य-परिकल्पना, यानी "नक्षत्र-अवधियाँ ऋतु-जलवायु से अधिक पूर्वानुमान-कौशल प्रदान नहीं करतीं", को अस्वीकार करने का पर्याप्त आधार नहीं मिला। कारण चार हैं। पहला, किसी भी समाविष्ट अध्ययन के उपलब्ध सार में नक्षत्र-आधारित पूर्वानुमान की तुलना जलवायु-औसत जैसे आधार-पूर्वानुमान से उस रूप में नहीं दी गई जो कौशल-मापन (skill score) की माँग है [11,12,35,36]। दूसरा, परिवर्तन-गुणांक 40–80 प्रतिशत बताता है कि एकल नक्षत्र-अवधि की वर्षा स्वाभाविक रूप से अत्यधिक अनिश्चित है [11]। तीसरा, पंचांग के अकेले घटक वर्ष की वर्षा का स्वरूप तय करने में अपर्याप्त पाए गए [35]। चौथा, भौतिक मार्ग का अभाव और अयनांश-विस्थापन अतिरिक्त सन्देह उत्पन्न करते हैं [9,31]। यह "अभाव का प्रमाण" नहीं, बल्कि "प्रमाण का अभाव" है; अतः यह निष्कर्ष अन्तिम नहीं, उपलब्ध साक्ष्य की स्थिति का वर्णन है।

8.2 एकीकृत तीन-स्तरीय उपयोग-ढाँचा

परम्परागत ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के बीच रचनात्मक सेतु के लिए निम्नलिखित तीन-स्तरीय ढाँचा प्रस्तावित है।

स्तर 1: कैलेंडर-स्तर। नक्षत्र को ऋतु-घड़ी की तरह उपयोग करें, पर अयनांश-सुधार के साथ। जिन कहावतों में "मानसून-आरम्भ" का अर्थ अभिप्रेत है, उनके लिए आज की तिथि को ऋतु-स्थिति के आधार पर पुनः मापा जाए, जैसा तालिका-1 का तुलनात्मक स्तम्भ संकेत देता है।

स्तर 2: जलवायु-स्तर। प्रत्येक कृषि-जलवायु क्षेत्र के लिए IMD और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के दीर्घकालीन ग्रीड-आँकड़ों से नक्षत्र-वार या पखवाड़ा-वार वर्षा-जलवायु तालिका बनाई जाए, जिसमें औसत के साथ परिवर्तन-गुणांक और जोखिम-सम्भावनाएँ दी जाएँ [11,41]। किसान को "इस नक्षत्र में औसत इतनी वर्षा" के साथ "और इसके आधे से कम होने की सम्भावना इतनी" बताना अधिक ईमानदार और उपयोगी होगा।

स्तर 3: निर्णय-स्तर। बुवाई, फसल-चयन और सिंचाई के निर्णय वर्षा-संचय जैसे मौसम-आधारित मानदण्डों और सत्यापित पूर्वानुमान से लिए जाएं [40,45]। जहाँ परम्परागत संकेत उपलब्ध हों, वे अतिरिक्त सूचना के रूप में उपयोग हों, पर निर्णायक न हों। जिला-स्तर के आकस्मिक कृषि-योजना ढाँचे, जिन्हें CRIDA ने सैकड़ों जिलों के लिए तैयार किया है, इसी प्रकार का व्यावहारिक आधार देते हैं [5]।

8.3 भावी शोध के लिए प्रस्तावित प्रोटोकॉल

भविष्य के शोध को निम्नलिखित कठोर प्रोटोकॉल अपनाना चाहिए ताकि प्रश्न का निर्णायक उत्तर मिल सके। पहला, परीक्षण से पूर्व पंजीकृत (pre-registered) परिकल्पनाएँ, जिनमें यह स्पष्ट हो कि किस नक्षत्र के लिए क्या भविष्यवाणी है। दूसरा, कम से कम 30–50 वर्षों के दैनिक ग्रिड-आँकड़े, जैसे IMD के उच्च-विभेदन आँकड़े [41], और अनेक स्थल। तीसरा, नियन्त्रण के रूप में समान लम्बाई के बिना-नाम वाले 14-दिवसीय "पखवाड़े" और यादृच्छिक रूप से खिसकाई गई कैलेंडर-इकाइयाँ, ताकि नक्षत्र-विशिष्टता और केवल ऋतु-चक्र को अलग किया जा सके। चौथा, पूर्वानुमान की गुणवत्ता का मापन जलवायु-औसत के सापेक्ष कौशल-स्कोर से। पाँचवाँ, अयनांश के अनुसार तिथियों का सुधार और यह जाँच कि कौन-सा कैलेंडर (निरयन या सायन) बेहतर कौशल देता है। छठा, कृषि-परिणामों, जैसे धान, ज्वार या दलहन की उपज, के साथ सम्बन्ध का परीक्षण, ताकि वर्षा से आगे उत्पादन-प्रभाव मापा जा सके, जैसा सुबाश आदि ने सीमित रूप में प्रयास किया [12]।

9. विमर्श

9.1 निष्कर्षों का समग्र चित्र

इस समीक्षा से जो चित्र बनता है, वह द्वि-आयामी है। एक ओर, नक्षत्र-आधारित कृषि-कैलेंडर भारतीय समाज की व्यावहारिक समझ का संकेत देता है कि वर्षा-ऋतु का अपना क्रम है और उसे समय-खण्डों में बाँटकर याद रखना सुविधाजनक है। दूसरी ओर, वही कैलेंडर जब कारण-प्रभाव के रूप में पढ़ा जाता है तो साक्ष्य उसका साथ नहीं देता। भौतिक कारण-मार्ग अनुपस्थित है; वर्षा की अन्तर्निहित परिवर्तनशीलता अत्यधिक है; और अयनांश के कारण कहावतों की तिथियाँ ऋतु से खिसक चुकी हैं [9,11,31]।

9.2 पारम्परिक ज्ञान के प्रति सन्तुलित दृष्टि

परम्परागत ज्ञान और आधुनिक विज्ञान का सम्बन्ध प्रतिद्वन्द्विता का नहीं, सत्यापन और सहयोग का होना चाहिए। अफ्रीकी और भारतीय अध्ययनों के अनुभव बताते हैं कि जब स्थानीय ज्ञान को सम्मान के साथ दर्ज किया जाता है और वैज्ञानिक पूर्वानुमान के साथ जोड़ा जाता है, तब किसान की निर्णय-क्षमता बढ़ती है [42–44]। नक्षत्र-परम्परा के सन्दर्भ में यह सहयोग तभी सार्थक होगा जब नक्षत्र को लोक-कैलेंडर के रूप में स्वीकार किया जाए और उसकी सीमाएँ ईमानदारी से बताई जाएँ।

9.3 नीतिगत निहितार्थ

कृषि-विस्तार सेवाओं के लिए तीन निहितार्थ उभरते हैं। पहला, पंचांग या नक्षत्र पर आधारित सलाह देते समय जोखिम-सम्भावनाओं का उल्लेख किया जाए। दूसरा, कृषि विश्वविद्यालय और IMD नक्षत्र-वार जलवायु-सारणियाँ अयनांश-सुधार सहित प्रकाशित करें, ताकि किसान की परिचित भाषा में वैज्ञानिक सूचना पहुँच सके। तीसरा, बारानी क्षेत्रों के लिए, जो खाद्यान्न का लगभग 40 प्रतिशत उत्पन्न करते हैं और जहाँ वर्षा पर निर्भरता सर्वाधिक है, आकस्मिक योजनाओं और फसल-विविधीकरण पर बल दिया जाए [4,5]।

9.4 अध्ययन की सीमाएँ

इस अध्ययन की कुछ सीमाएँ स्पष्ट हैं। पहली, तीन अनुभवजन्य अध्ययनों (बिहार, कर्नाटक, बृहत्संहिता-परीक्षण) के निष्कर्ष उनके प्रकाशित सारांशों पर आधारित हैं, अतः पूर्ण पाठ में उपलब्ध सांख्यिकीय परीक्षण, विधि-विवरण और सीमाएँ यहाँ पूरी तरह नहीं परखी जा सकीं। दूसरी, चयनित अध्ययन भौगोलिक रूप से सीमित हैं और भारत की विविध जलवायु का प्रतिनिधित्व नहीं करते। तीसरी, लेखक की खगोलीय गणनाएँ निम्न-परिशुद्धता सूत्रों और रेखिक अयनांश-सन्निकटन पर आधारित हैं; निर्णायक प्रयोग के लिए एफेमेरिस-स्तर की गणना आवश्यक होगी। चौथी, यह एक समीक्षात्मक विश्लेषण है, किसी औपचारिक डेटाबेस-खोज या मूल क्षेत्र-प्रयोग पर आधारित नहीं, जैसा पद्धति-खण्ड में बताया गया है। पाँचवीं, संस्कृत-श्लोकों को सुलभ सम्पादित स्रोतों के अनुसार दिया गया है, जिनमें पाठभेद सम्भव हैं; शोध-प्रकाशन से पूर्व किसी समीक्षित संस्करण से मिलान करना उचित होगा।

9.5 अध्ययनों के बीच तुलनात्मक संगति और असंगति

चारों मुख्य अनुभवजन्य अध्ययनों को साथ रखने पर कुछ संगतियाँ और असंगतियाँ दिखती हैं। संगति यह है कि सभी अध्ययन नक्षत्र-अवधियों को वर्षा-जलवायु के विश्लेषण की उपयोगी इकाई मानते हैं और सभी में स्थान-विशिष्ट स्वरूप स्पष्ट है [11,12,35]। असंगति मुख्यतः निष्कर्ष की भाषा में है। महाराष्ट्र-गोवा का अध्ययन उच्च परिवर्तनशीलता के आधार पर सावधान करता है [11], जबकि बिहार और कर्नाटक के अध्ययन कुछ अवधियों में अपेक्षाकृत कम परिवर्तनशीलता और सार्थक प्रवृत्तियाँ दिखाते हैं [12,35]। ये दोनों बातें विरोधी नहीं हैं: वर्षा की परिवर्तनशीलता क्षेत्र और अवधि के साथ बदलती है, और कुछ क्षेत्रों-अवधियों में मानसून अधिक स्थिर होता है। बृहत्संहिता-आधारित परीक्षण में अनुरूपता का स्तर संयोग-स्तर के निकट रहा, पर कुछ वर्गों में ऊँचा दिखा [36]; इसका स्पष्ट अर्थ तभी निकलेगा जब नियन्त्रित संयोग-आधार से तुलना हो।

एक और अन्तर पद्धति का है। सुबाश आदि ने वर्षा और फसल-उत्पादकता को जोड़ने का प्रयास किया [12], जबकि अन्य अध्ययन केवल वर्षा तक सीमित रहे। कृषि-उत्पादन वर्षा के साथ-साथ मिट्टी, तापमान, किस्म, सिंचाई और प्रबन्धन पर भी निर्भर करता है [7,8], अतः वर्षा की भविष्यवाणी सही भी हो तो उत्पादन का अनुमान स्वतः सही नहीं हो जाता। यह भेद शीर्षक के "कृषि उत्पादन में प्रभाव" वाले हिस्से के लिए महत्वपूर्ण है: नक्षत्र से वर्षा तक का सेतु ही अपुष्ट है, और वर्षा से उत्पादन तक का सेतु अनेक अन्य कारकों से होकर जाता है। इसलिए "नक्षत्र का कृषि-उत्पादन पर प्रत्यक्ष प्रभाव" सिद्ध करने के लिए दोहरे सत्यापन की आवश्यकता होगी।

10. निष्कर्ष

इस शोध-पत्र ने वर्षा ऋतु और कृषि उत्पादन पर विशिष्ट नक्षत्रों के गोचर के प्रभाव का संस्कृत-स्रोतों, कृषि-मौसम विज्ञान और खगोलीय गणना के आलोक में विश्लेषण किया। मुख्य निष्कर्ष निम्न हैं।

पहला, संस्कृत परम्परा में वर्षा-अन्न-जीवन की शृंखला अत्यन्त सुदृढ़ रूप से स्थापित है, और "वृष्टिमूला कृषिः सर्वा" का कथन आधुनिक आँकड़ों से मेल खाता है [4,14]। पर परम्परा में ज्योतिष का मूल प्रयोजन कालविधान था [22], और बाद में कालसूचक नक्षत्रों को फलसूचक मान लिया गया।

दूसरा, उपलब्ध अनुभवजन्य अध्ययन नक्षत्र-अवधियों की वर्षा की उच्च परिवर्तनशीलता दिखाते हैं (CV 40–80% चरम मानसून में), जो नक्षत्र-आधारित कृषि-निर्णय को जोखिमपूर्ण बनाती है [11]। पंचांग-कथनों और वास्तविक वर्षा के मध्य सहमति कुछ वर्षों में ऊँची और अन्य वर्षों में कम रही, तथा अकेले घटक निर्णायक सिद्ध नहीं हुए [35]।

तीसरा, लेखक की गणना के अनुसार सूर्य के नक्षत्र-प्रवेश की तिथियाँ वराहमिहिर-काल की तुलना में ऋतु-चक्र के सापेक्ष लगभग 21 दिन आगे खिसक चुकी हैं। इस कारण "आर्द्रा में मानसून" जैसी कहावतों को आज के कैलेंडर में अक्षरशः पढ़ना भ्रामक हो सकता है।

चौथा, नक्षत्र-गोचर और वर्षा के बीच किसी भौतिक कारण-मार्ग का साक्ष्य उपलब्ध नहीं है [2,31], और नक्षत्र-आधारित पूर्वानुमान के कौशल का जलवायु-औसत के विरुद्ध निर्णायक परीक्षण अब तक उपलब्ध साहित्य में स्पष्ट रूप से नहीं मिलता।

पाँचवाँ, नक्षत्र का उचित स्थान लोक-कैलेंडर और संचार-माध्यम का है। इसे अयनांश-सुधार, स्थानीय जलवायु-आँकड़ों, जोखिम-सम्भावनाओं और सत्यापित पूर्वानुमानों के साथ जोड़ने पर यह परम्परा और विज्ञान के बीच उपयोगी सेतु बन सकता है [41,45]।

अन्ततः, यह शोध-पत्र परम्परागत ज्ञान का न खण्डन करता है, न समर्थन; वह इतना कहता है कि प्रत्येक दावे को उसके साक्ष्य के अनुपात में ही स्वीकार किया जाए। भविष्य का शोध पूर्व-पंजीकृत, नियन्त्रित और बहु-स्थलीय परीक्षणों से इस प्रश्न का अधिक निर्णायक उत्तर दे सकता है।

सन्दर्भ

1. India Meteorological Department. Press release: salient features of the southwest monsoon 2022. New Delhi: Ministry of Earth Sciences, Government of India; 2022.
2. Webster PJ, Magaña VO, Palmer TN, Shukla J, Tomas RA, Yanai M, et al. Monsoons: processes, predictability, and the prospects for prediction. *J Geophys Res.* 1998;103(C7):14451–510.
3. Gadgil S. The Indian monsoon and its variability. *Annu Rev Earth Planet Sci.* 2003;31:429–67.
4. Central Research Institute for Dryland Agriculture. Vision 2030. Hyderabad: Indian Council of Agricultural Research; 2011.
5. Central Research Institute for Dryland Agriculture. Vision 2050. Hyderabad: Indian Council of Agricultural Research; 2015.
6. Gadgil S, Gadgil S. The Indian monsoon, GDP and agriculture. *Econ Polit Wkly.* 2006;41(47):4887–95.
7. Gadgil S, Abrol YP, Seshagiri Rao PR. On growth and fluctuation of Indian foodgrain production. *Curr Sci.* 1999;76(4):548–56.
8. Kumar KK, Kumar KR, Ashrit RG, Deshpande NR, Hansen JW. Climate impacts on Indian agriculture. *Int J Climatol.* 2004;24(11):1375–93.
9. Rao SB. Indian astronomy: an introduction. Hyderabad: Universities Press; 2000.
10. Pingree D. *Jyotiḥśāstra: astral and mathematical literature.* Wiesbaden: Otto Harrassowitz; 1981.
11. De US, Joshi UR, Prakasa Rao GS. Nakshatra based rainfall climatology. *Mausam.* 2004;55(2):305–12. doi:10.54302/mausam.v55i2.1095
12. Subash N, Singh SS, Priya N. Nakshatra based rainfall variability, trends and its influence on rice-wheat production – a case study over two sites in Bihar, India. *J Agrometeorol.* 2011;13(1). doi:10.54386/jam.v13i1.1330
13. Bhat MR, translator. *Brihat Samhita of Varahamihira (text with translation).* New Delhi: Motilal Banarsidass; 1981.

14. Sadhale N, editor and translator. Krishi-Parashara (agriculture by Parashara): a text on ancient Indian agriculture in Sanskrit. Secunderabad: Asian Agri-History Foundation; 1999. (Agri-History Bulletin No. 2).
15. Page MJ, McKenzie JE, Bossuyt PM, Boutron I, Hoffmann TC, Mulrow CD, et al. The PRISMA 2020 statement: an updated guideline for reporting systematic reviews. BMJ. 2021;372:n71.
16. Tricco AC, Lillie E, Zarin W, O'Brien KK, Colquhoun H, Levac D, et al. PRISMA extension for scoping reviews (PRISMA-ScR): checklist and explanation. Ann Intern Med. 2018;169(7):467–73.
17. Ahluwalia PS. Ethical issues in social science research. Shodh Patra: Int J Multidiscip Stud. 2024:1–8.
18. Ahluwalia PS. Plagiarism: detection techniques and tools. Siddhanta's Int J Adv Res Arts Humanit. 2024:1–11.
19. Jamison SW, Brereton JP. The Rigveda: the earliest religious poetry of India. Oxford: Oxford University Press; 2014.
20. Vyāsa. Śrīmadbhagavadgītā [Sanskrit text with Hindi commentary]. Gorakhpur: Gita Press.
21. Olivelle P, translator. The law code of Manu. Oxford: Oxford University Press; 2004.
22. Subbarayappa BV, Sarma KV, editors. Indian astronomy: a source book. Bombay: Nehru Centre; 1985.
23. Majumdar GP, Banerji SC, editors. Kṛṣi-Parāśara. Calcutta: Asiatic Society; 1960. (Bibliotheca Indica, Work No. 285).
24. Adhikari SK. Agriculture in ancient Sanskrit texts: relevance in modern Nepal. Econ J Nepal. 2012;35(1):57–66. doi:10.3126/ejon.v35i1.13412
25. Ayangarya VS. Krishi-Parashara rainfall prediction – a live experience at Gandharvanagari. Asian Agri-Hist. 2007;11(3):243–4.
26. Srinivasan TM. Measurement of rainfall in ancient India. Indian J Hist Sci. 1976;11:148–57.
27. Ahluwalia PS. भाषा, संस्कार और संस्कृति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण. शब्दसागर. 2023:35–41.
28. Ahluwalia PS. संस्कार और संस्कृति: समाजशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन. शब्दसागर. 2023:17–25.
29. Ahluwalia PS. भाषा और संस्कृति के विकास में संस्कारों का महत्व: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन. शब्दसागर. 2024:1–8.
30. Ahluwalia PS. वैश्विक परिदृश्य में पर्यावरण संरक्षण में महिलाओं का योगदान. Siddhanta's Int J Adv Res Arts Humanit. 2024:107–23.
31. Chapman S, Lindzen RS. Atmospheric tides: thermal and gravitational. Dordrecht: D. Reidel; 1970.
32. Bradley DA, Woodbury MA, Brier GW. Lunar synodical period and widespread precipitation. Science. 1962;137(3531):748–9.
33. Adderley EE, Bowen EG. Lunar component in precipitation data. Science. 1962;137(3531):749–50.
34. Carlson S. A double-blind test of astrology. Nature. 1985;318(6045):419–25.
35. Statistical validation of almanac predicted rainfall [thesis]. Bangalore: University of Agricultural Sciences, GKVK; 2019.
36. Meticulous and meritorious meteorology enshrined in the Brihat Samhita – a comparative case study over four Indian regions situated in diverse climatic zones. Indian J Sci Technol. 2012.

37. Guhathakurta P, Rajeevan M. Trends in the rainfall pattern over India. *Int J Climatol*. 2008;28(11):1453–69.
38. Goswami BN, Venugopal V, Sengupta D, Madhusoodanan MS, Xavier PK. Increasing trend of extreme rain events over India in a warming environment. *Science*. 2006;314(5804):1442–5.
39. Douville H, Raghavan K, Renwick J, Allan RP, Arias PA, Barlow M, et al. Water cycle changes. In: Masson-Delmotte V, Zhai P, Pirani A, Connors SL, Péan C, Berger S, et al, editors. *Climate change 2021: the physical science basis*. Cambridge: Cambridge University Press; 2021. p. 1055–210.
40. Rajeevan M, Pai DS, Anil Kumar R, Lal B. New statistical models for long-range forecasting of southwest monsoon rainfall over India. *Clim Dyn*. 2007;28(7–8):813–28.
41. Pai DS, Sridhar L, Rajeevan M, Sreejith OP, Satbhai NS, Mukhopadhyay B. Development of a new high spatial resolution ($0.25^\circ \times 0.25^\circ$) long period (1901–2010) daily gridded rainfall data set over India and its comparison with existing data sets over the region. *Mausam*. 2014;65(1):1–18.
42. Acharya S. Presage biology: lessons from nature in weather forecasting. *Indian J Tradit Knowl*. 2011;10(1):114–24.
43. Roncoli C, Ingram K, Kirshen P. Reading the rains: local knowledge and rainfall forecasting in Burkina Faso. *Soc Nat Resour*. 2002;15(5):409–27.
44. Orlove B, Roncoli C, Kabugo M, Majugu A. Indigenous climate knowledge in southern Uganda: the multiple components of a dynamic regional system. *Clim Change*. 2010;100(2):243–65.
45. Gadgil S, Rao PRS, Rao KN. Use of climate information for farm-level decision making: rainfed groundnut in southern India. *Agric Syst*. 2002;74(3):431–57.